17 दिसम्बर 2008, कुल पृष्ठ : 12, मूल्य : 2/ आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

जो स्वयं स्वभाव से पवित्र है, जिसे पवित्र होने की आवश्यकता नहीं, जो सदा से ही पवित्र है; उसके आश्रय से ही पवित्रता प्रकट होती है।
ह्न प. प्र. नयचक्र : पृष्ठ ह्न108

वर्ष : 31, अंक : 18 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
दिसम्बर (द्वितीय), 2008 प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव हर्षोल्लासपूर्वक सम्पन्न

चैतन्यधाम-अहमदाबाद (गुज.) : यहाँ श्री गिरनार, शत्रुंजय, पावागढ़, तारंगा तथा अध्यात्मतीर्थ सोनगढ़ के मध्य में अहमदाबाद-हिम्मतनगर-उदयपुर नेशनल हाइवे पर स्थित चैतन्यधाम प्रांगण में पूज्यश्री कुन्दकुन्द कहान धर्मरत्न पण्डित श्री बाबुभाई मेहता दिगम्बर जैन सत्समागम पब्लिक चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा, धणप के अन्तर्गत श्री 1008 आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन शुक्रवार, दिनांक 28 नवम्बर से बुधवार, दिनांक 3 दिसम्बर 2008 तक अनेक विशिष्ट कार्यक्रमों सहित सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर भगवान श्री आदिनाथ, शांतिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर की पंचधातु की प्रतिमायें; साथ ही वर्तमानकालीन 24 तीर्थंकरों की पाषाण प्रतिमायें भी विराजमान की गईं।

महोत्सव में अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल** के प्रतिदिन समयसार ग्रंथाधिराज पर हुये मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। आपके अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, बा. ब्रह्मचारी सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित ज्ञानचंदजी विदिशा, पण्डित शैलेषभाई तलोद, श्री रजनीभाई दोशी, श्री मीठालाल दोशी, श्री चन्दूभाई एवं श्री इंदुभाई संघवी के भी प्रवचन हुये।

पंचकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री दिल्ली के निर्देशन में सह-प्रतिष्ठाचार्य ब्रह्मचारी धन्यकुमारजी बेलोकर गजपंथा, पण्डित मधुकरजी जलगाँव, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बाँसवाड़ा, पण्डित ऋषभजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित अजितजी अलवर, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पण्डित सुनीलकुमारजी भोपाल, पण्डित कांतिकुमारजी इन्दौर, पण्डित श्री सुकुमालजी झाँझरी, पण्डित प्रियंकजी शास्त्री दिल्ली, पण्डित श्रेयांसजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित के. सी. जी शास्त्री, पण्डित सचिनजी शास्त्रीआदि के सहयोग से शुद्ध तेरापंथ आम्नायानुसार सम्पन्न कराई गई।

महोत्सव के सम्पूर्ण कार्यक्रम पण्डित अमृतभाई फतेपुर एवं पण्डित रजनीभाई दोशी के निर्देशन में सम्पन्न हुये। मंच के सभी कार्यक्रमों का कुशल संचालन पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने किया।

महोत्सव में श्री आदिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती ललिताबेन जयंतीलाल मेहता तथा डॉ. जयंतीलाल चुन्नीलाल मेहता फतेपुर अहमदाबाद को प्राप्त हुआ। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री सतीशकुमार अमृतलाल मेहता तथा श्रीमती रीताबेन फतेपुर अहमदाबाद थे। कुबेरइन्द्र श्री नवीनचंद्र केशवलाल मेहता मुंबई एवं यज्ञनायक श्री अरविन्दकुमार ताराचंद गाँधी तलोद थे।

विद्वत्सम्मान

महामहोत्सव के मध्य तपकल्याणक के अवसर पर दिनांक 1 दिसम्बर,08 को डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा प्रतिवर्ष विद्वानों के सम्मान के क्रम में जैन दर्शन के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में किये गये विशिष्ट कार्यों के लिये **पण्डित शैलेषभाई तलोद** का सम्मान किया गया।

इस प्रसंग पर पण्डित विपिनजी शास्त्री मुम्बई ने सम्मानमूर्ति का परिचय दिया। आपको प्रशस्ति, शॉल, श्रीफल एवं नगद राशि से पुरस्कृत किया गया

कार्यक्रम में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, दादा विमलचन्दजी, डॉ. उत्तमचन्दजी, ब्र. सुमतप्रकाशजी, पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा, श्री अनंतभाई सेठ, श्रीबसंतभाई, श्री रजनीभाई, श्री महीपालजी एवं श्री बीनूभाई आदि उपस्थित थे।

इस अवसर पर स्वाध्याय भवन, २ धर्मशाला वींग, गुरुदेवश्री के स्टेच्यू एवं नवनिर्मित मंदिर का उद्घाटन किया गया।

रात्रि में इन्द्रसभा/राजसभा के अतिरिक्त नवरंगपुरा मंडल के बच्चों द्वारा विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का मंचन किया गया।

महोत्सव को आकर्षक

(शेष पृष्ठ-३ पर...)

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान देखिये जी-जागरण
प्रतिदिन प्रातः 6.40 से 7.00 बजे तक पर

सम्पादकीय –

चलते-फिरते सिद्धों से गुरु (20)

(गतांक से आगे ...) ह्न पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

६.'संयमन को संयम कहते हैं; संयमन अर्थात् उपयोग को पर-पदार्थ से समेटकर आत्मसन्मुख करना, अपने में सीमित करना, उपयोग की स्वसन्मुखता, स्वलीनता ही **निश्चयसंयम** है। अथवा पाँच व्रतों का धारण करना, पाँच समितियों का पालन करना, क्रोधादि कषायों का निग्रह करना, मन-वचन-काय की प्रवृत्तिरूप तीनों दण्डों का त्याग करना और पाँच इन्द्रियों के विषयों को जीतना संयम है।'

संयम के साथ लगा 'उत्तम' शब्द सम्यग्दर्शन की सत्ता का सूचक है। जैसे बीज के बिना वृक्ष की उत्पत्ति, स्थिति, वृद्धि व फलागम संभव नहीं है; वैसे ही सम्यग्दर्शन के बिना संयम की उत्पत्ति, स्थिति, वृद्धि व फलागम संभव नहीं है। इस सन्दर्भ में महान दिग्गजाचार्य वीरसेनस्वामी लिखते हैं-

''**सो संजमो जो सम्माविणाभावी ण अण्णो।**

संयम वही है, जो सम्यक्त्व का अविनाभावी हो, अन्य नहीं।''

''जो मुनि ऐसे निश्चय संयमपूर्वक व्यवहार में जीवों की रक्षा में तत्पर हुआ, गमन-आगमन आदि सब कार्यों में तृण का छेदमात्र भी नहीं चाहता है, नहीं करता है; उस मुनि के संयमधर्म होता है।'

संयम मुक्ति का साक्षात् कारण है। दुःखों से छूटने का एकमात्र उपाय सम्यग्दर्शनसहित संयम अर्थात् उत्तमसंयम ही है। बिना संयम धारण किये तीर्थंकरों को भी मोक्ष प्राप्त नहीं होता। कहा भी है ह्न

जिस बिना नहीं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग कीच में।
इक घरी मत विसरो करो नित, आयु जम मुख बीचमें।।

निरन्तर मौत की शंका से घिरे मानव को कवि प्रेरणा दे रहे हैं कि संयम को एक घड़ी के लिये भी मत भूलो, क्योंकि सारा जगत संयम के बिना ही इस संसार की कीचड़ में फँसा हुआ है। संसार-सागर से पार उतरने वाला एकमात्र संयम ही है। संयम एक बहुमूल्य रत्न है। इसे लूटने के लिए पंचेन्द्रिय के विषय-कषायरूपी चोर निरन्तर चारों ओर चक्कर लगा रहे हैं। कहते हैं ह्न

संयम रतन संभाल, विषय चोर चहुँ फिरत हैं।
उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजैं अघ तेरे।
सुरग नरक पशु गति में नाहीं, आलस हरन करन सुख ठाहीं।।

यहाँ अपने मन को समझाते हुए कहा गया है कि हे मन! उत्तमसंयम को धारण करने से तेरे भव-भव के बंधे पाप कट जावेंगे।संयम स्वर्गों और नरकों में तो है ही नहीं, अपितु पूर्ण संयम तो तिर्यंच गति में भी नहीं है। एकमात्र मनुष्य भव ही ऐसा है, जिसमें संयम धारण किया जा सकता है।

मनुष्यजन्म की सार्थकता संयम धारण करने में ही है। कहते हैं देव भी इस संयम के लिए तरसते हैं। जिसके लिए देवता भी तरसते हों और जिस बिना तीर्थंकर भी न तिरें, वह संयम कैसा होगा? यह बात विचारणीय है।

व्यवहार संयम दो प्रकार का होता है ह्न (१) प्राणी संयम और (२) इन्द्रिय संयम।

छहकाय के जीवों के घात एवं घात के भावों के त्याग को प्राणीसंयम और पंचेन्द्रियों तथा मन के विषयों के त्याग को इन्द्रियसंयम कहते हैं।

षट्काय के जीवों की रक्षारूप अहिंसा एवं पंचेन्द्रियों के विषयों के त्यागरूप व्रतों के पालन में द्रव्यप्राणरूप घात एवं बाह्य भोगप्रवृत्ति के त्याग को ही संयम भाव लेना पर्याप्त नहीं है। हमारे अभिप्राय में जो वासना बनी रहती है, उसकी ओर भी हमारा ध्यान जाना चाहिए।

इस संदर्भ में पंडित टोडरमलजी लिखते हैं ह्न

''बाह्य त्रस-स्थावर की हिंसा तथा इन्द्रिय-मन के विषयों में प्रवृत्ति उसको अविरति जानता है; हिंसा में प्रमाद परिणति मूल है और विषयसेवन में अभिलाषा मूल है, उसका अवलोकन नहीं करता। तथा बाह्य क्रोधादि करना उसको कषाय जानता है, अभिप्राय में राग-द्वेष बस रहे हैं, उनको नहीं पहिचानता।''

यदि बाह्य हिंसा का त्याग व इन्द्रियों के विषयों की प्रवृत्ति नहीं होने का ही नाम ही संयम है तो फिर देवगति में भी संयम होना चाहिए; क्योंकि सोलह स्वर्गों के ऊपर तो विषयों की प्रवृत्ति में संयमी देवों में भी कम पाई जाती है। तथा अणुव्रती श्रावकों के त्रसहिंसा का त्याग होता है; तथापि उद्योगी, आरंभी एवं विरोधी त्रसहिंसा से भी वह नहीं बच पाता है। प्रयोजनभूत स्थावरहिंसा तो होती ही है।

पंचेन्द्रियों के विषयों की दृष्टि से विचार करें तो स्पर्शन इन्द्रिय के सन्दर्भ में यद्यपि वह परस्त्री सेवन का सर्वथा त्यागी होता है, तथापि स्वस्त्री-सेवन तो उसके होता ही है; जबकि अहमिन्द्रों के स्त्री-सेवन का विकल्प नहीं उठता। इसीप्रकार रसनेन्द्रिय के विषय में विचार करें तो न सही अभक्ष्य भक्षण एवं खाने-पीने की लोलुपता; पर खाता-पीता तो है । भले ही शुद्ध खान-पान ही सही; पर स्वाद तो लेता ही होगा। अहमिन्द्रों के तो हजारों वर्ष तक भोजन ही नहीं, स्वाद की तो बात ही दूर है। घ्राण, चक्षु व कर्ण के विषय में भी यही है। फिर भी अणुव्रती मनुष्य को संयमी कहा है।

वस्तुतः संयम सम्यग्दर्शनपूर्वक आत्माश्रय से उत्पन्न हुई उस परम पवित्र वीतराग परिणति का नाम है, जो कि छठे-सातवें गुणस्थान में झूलने वाले या उससे आगे बढ़े हुए मुनिराजों के अनन्तानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण कषाय के अभाव में होती है; तथा जो पंचमगुणस्थानवर्ती मनुष्य और तिर्यंचों में भी अनन्तानुबंधी व अप्रत्याख्यान कषाय के अभाव में पाई जाती है।

७. उत्तमतप के स्पष्टीकरण में आचार्य कुन्दकुन्द के प्रवचनसार गाथा ७९ की टीका में आचार्य जयसेन ने कहा है उसका भाव इसप्रकार है कि ह्न ''समस्त रागादि परभावों की इच्छा के त्याग द्वारा स्वस्वरूप में प्रतपन ह्नविजयन करना तप है। तात्पर्य यह है कि समस्त रागादि भावों के त्यागपूर्वक आत्मस्वरूप में ह्न अपने में लीन होना अर्थात् आत्मलीनता द्वारा विकारों पर विजय प्राप्त करना तप है।''

इसीप्रकार का भाव प्रवचनसार की तत्त्वप्रदीपिका टीका में आचार्य अमृतचन्द्र ने भी व्यक्त किया है। 'धवला' में इच्छा निरोध को तप कहा है। इसप्रकार हम देखते हैं कि नास्ति से इच्छाओं का अभाव और अस्ति से आत्मस्वरूप में लीनता ही तप है।

तप के साथ लगा 'उत्तम' शब्द सम्यग्दर्शन की सत्ता का सूचक है। सम्यग्दर्शन के बिना किया गया समस्त तप निरर्थक है।

अष्टपाहुड़ की दर्शनपाहुड़ की गाथा ५ में ऐसा कहा है कि ह्न ''यदि कोई जीव सम्यक्त्व के बिना करोड़ों वर्षों तक उग्र तप भी करे तो भी वह बोधिलाभ प्राप्त नहीं कर सकता।''

इसीप्रकार का भाव पंडित दौलतरामजी ने व्यक्त किया है ह्न

''कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे।
ज्ञानी के छिन माँहि, त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते।।''

देह और आत्मा का भेद नहीं जानने वाला अज्ञानी मिथ्यादृष्टि यदि घोर तपश्चरण भी करे तब भी मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकता।

उत्तमतप सम्यक्चारित्र का भेद है और सम्यक्चारित्र सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान बिना नहीं होता। परमार्थ के बिना अर्थात् शुद्धात्मतत्त्वरूपी परम अर्थ की प्राप्ति बिना किया गया समस्त तप बालतप है। जो आत्मा को आत्मा में आत्मा से धारण कर रखता है, टिकाये रखता है, जोड़े रखता है; वह अध्यात्म है और वस्तुतः ऐसा अध्यात्म ही तप है।

जो मुनि इसलोक-परलोक के सुख की अपेक्षा से रहित होता हुआ सुख-दुःख, शत्रु-मित्र, तृण-कंचन, निन्दा-प्रशंसा आदि में राग-द्वेष रहित समभावी होता हुआ अनेक प्रकार से कायक्लेश करता है, उस मुनि के निर्मल तपधर्म होता है। सहज निश्चयनयात्मक परमस्वभावरूप परमात्मा में प्रतपन करना, दृढ़ता से तन्मय होना सो तप है।' अथवा शुद्ध कारणपरमात्मतत्त्व में सदा अन्तर्मुखरूप से प्रतपन (लीनता) तप है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि नास्ति से इच्छाओं का अभाव और अस्ति से आत्मस्वरूप में लीनता ही तप है। यद्यपि तप आत्मशोधन एवं कर्मक्षय की एक अखण्ड प्रक्रिया है; तथापि विधि और प्रक्रिया के आधार पर तप का विभाजन दो प्रकार से किया गया है ह्न बाह्य तप और अभ्यन्तर तप। इनमें दोनों के छह-छह भेद हैं। इनकी चर्चा १२ तप के रूप में पृथक् से हैं।

तप की महिमा गाते हुए महाकवि द्यानतराय लिखते हैं ह्न

''तप चाहैं सुरराय, करम शिखर को बज्र है।
द्वादश विध सुखदाय, क्यों न करैं निज सकति सम।।
उत्तम तप सब माँहि बखाना, करम शैल को बज्र समाना।''

उक्त पंक्तियों में दो-दो बार तप के लिए कर्मरूपी पर्वतों को भेदने वाला बताया गया है। यह भी कहा गया है कि जिस तप को देवराज इन्द्र भी चाहते हैं, जो वास्तविक सुख प्रदान करने वाला है; उसे दुर्लभ मनुष्यभव प्राप्त कर हम अपनी शक्ति अनुसार क्यों न करें? अर्थात् हमें अपनी शक्ति-अनुसार तप अवश्य करना चाहिए। जिस तप के लिए देवराज तरसें और जो तप कर्म-शिखर को बज्र-समान हो वह तप कैसा होता होगा ह्न यह बात मननीय है। उसे मात्र दो-चार दिन भूखे रहने या अन्य प्रकार से किये बाह्य कायक्लेशादि तक सीमित नहीं किया जा सकता।

यदि भोजनादि नहीं करने का नाम ही तप होता तो फिर देवता उसके लिए तरसते क्यों? भोजनादि का त्याग तो वे आसानी से कर सकते हैं। उनके भोजनादि का विकल्प भी हजारों वर्ष तक नहीं होता। अतः हमें तप के वास्तविक स्वरूप को समझ कर यथाशक्ति आचरण करना होगा। **(क्रमशः...)**

(पृष्ठ १ का शेष...)

बनाने हेतु श्री टोडरमल संगीत सरिता जयपुर एवं श्री सीमंधर संगीत सरिता छिंदवाड़ा ने प्रासंगिक गीतों का रसास्वादन कराया।

प्रतिष्ठा महोत्सव में पूरे देश से हजारों मुमुक्षु भाई-बहिनों ने पधारकर धर्मलाभ लिया। इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से ९० हजार ९२८ रुपये का सत्साहित्य एवं ६५ हजार ७८४ घण्टों के डी.वी.डी. एवं सी.डी कैसिट्स घर-घर पहुँचे। **ह्न सचिन शास्त्री, गढ़ी**

साप्ताहिक गोष्ठियाँ सम्पन्न

जयपुर (राज.) : श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय की साप्ताहिक रविवारीय गोष्ठियों की श्रृंखला में दिनांक 23 नवम्बर को **प्रमाण-नय : अनुशीलन** विषय पर नवम गोष्ठी का आयोजन जौहरी बाजार, घी वालों के रास्ते में स्थित श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन तेरापंथियान मंदिर में किया गया, जिसकी अध्यक्षता पण्डित संजीवकुमारजी गोधा ने की। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमान सुशीलजी सेठी भी मंचासीन थे।

इस गोष्ठी का संचालन सोमिल जैन ने किया तथा दीपक जैन व अतुल जैन को श्रेष्ठ वक्ता के रूप में चुना गया। इस अवसर पर अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन द्वारा संचालित पटाखा विरोधी योजना के तहत पटाखे न छोड़नेवाले बच्चों को मंदिर की ओर से पुरस्कृत भी किया गया।

अंत में मंदिर के मंत्रीजी द्वारा मंदिर का परिचय दिया गया। आभार प्रदर्शन पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री ने किया।

इसी श्रृंखला में दिनांक 7 दिसम्बर को छहढाला पर आधारित **संसार से मोक्ष के पथ पर** विषय पर दशम रविवारीय गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता डॉ. भागचंदजी जैन ने की।

गोष्ठी का संचालन आशीष जैन ने किया तथा स्वानुभव जैन व मयंक जैन को श्रेष्ठ वक्ता के रूप में चुना गया।

भिण्ड में आध्यात्मिक संगोष्ठी

भिण्ड (म. प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन महावीर परमागम मंदिर ट्रस्ट भिण्ड द्वारा पाँच दिवसीय आध्यात्मिक संगोष्ठी बा. ब्र. श्री रवीन्द्रजी के सानिध्य में शुक्रवार, दिनांक 16 से मंगलवार, दिनांक 20 जनवरी 2009 तक आयोजित की जा रही है।

संगोष्ठी में बा. ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, डॉ. वीरसागरजी शास्त्री दिल्ली एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा आदि विद्वानों के व्याख्यानों का लाभ प्राप्त होगा।

समस्त साधर्मी भाई-बहिनों को इष्ट परिजनों सहित पधारने का वात्सल्यपूर्ण आमंत्रण है।

कृपया अपने आगमन की सूचना अवश्य देवें, जिससे आपकी समुचित व्यवस्था की जा सके।

महेन्द्र शास्त्री — मंत्री
वीरसेन सर्राफ — अध्यक्ष

श्री दिगम्बर जैन महावीर परमागम मंदिर ट्रस्ट
लश्कर रोड़, नियर परेट चौराहा, भिण्ड ह्न 477001 (म. प्र.)

राजेन्द्रजी बंसल का लेख

राजेन्द्रजी बंसल का लेख

राजेन्द्रजी बंसल का लेख

मोक्षमार्ग प्रकाशक का सार 20

तीसरा प्रवचन – डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

नरकगति और तिर्यंचगति में दुःख हैं; यह तो सभी लोग मानते हैं; परन्तु मनुष्य व देवगति में भी दुःख ही दुःख हैं ह्न यह बात सभी को सहज स्वीकार नहीं होती है।

पण्डित टोडरमलजी ने इस तीसरे अधिकार में मनुष्यगति और देवगति के जीव भी दुःखी हैं ह्न इस बात को सयुक्ति समझाया है; जिसका सार छहढ़ाला में पण्डित दौलतरामजी इसप्रकार प्रस्तुत करते हैं ह्न

जननी उदर बस्यो नव मास, अंग-सकुचतैं पायो त्रास।
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर।।१३।।
बालपने में ज्ञान न लह्यौ, तरुण समय तरुणीरत रह्यौ।
अर्द्धमृतक-सम बूढ़ापनो, कैसे रूप लखै आपनो।।१४।।
कभी अकाम-निर्जरा करै, भवनत्रिक में सुरतन धरै।
विषयचाह-दावानल दह्यो, मरत विलाप करत दुख सह्यो।।१५।।
जो विमानवासी हू थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुख पाय।
तहँ तैं चय थावर-तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करै।।१६।।

मनुष्य गति में जन्म से पहिले नौ महिनों तक माँ के पेट में रहना पड़ता है; वहाँ स्थान की कमी के कारण अंगों के सिकुड़े रहने से असह्य वेदना सहनी पड़ती है और जब जन्म होता, तब जो भयंकर पीड़ा होती है, उसका कहना तो असंभव सा ही है, उसका तो कोई ओर-छोर ही नहीं है।

जन्म के बाद इसका बचपन अज्ञानदशा में ही बीत जाता है और जवानी में यह जवान पत्नी के राग में लीन रहता है। जरा विचार तो करो कि अधमरे के समान वृद्धावस्था में अपने आत्मा को प्राप्त करने का पुरुषार्थ कैसे किया जा सकता है?

यदि कभी अकामनिर्जरा के कारण देवगति में भवनवासी, व्यंतर या ज्योतिषी देव हो जाता है तो वहाँ पंचेन्द्रिविषयों के दावानल में जलता रहता है और जब मरन का समय आता है; तब विलाप करने लगता है। इसप्रकार यह जीव भवनत्रिक देवों में दुःख भोगता रहता है।

यदि कभी वैमानिक देव हो गया, स्वर्गों में चला गया; तब भी वहाँ सम्यग्दर्शन के बिना दुःखी ही रहता है। और अन्त में मिथ्यात्व के कारण वहाँ से च्युत होकर एकेन्द्रियपर्याय में चला जाता है, निगोद में चला जाता है।

इसप्रकार यह जीव इस संसार में पंचपरावर्तन करते हुये सर्वत्र ही अनन्त दुःख भोगता रहता है।

देखो, वैमानिक देवों की चर्चा करते हुये उन्होंने ३१ सागर की आयु वाले नववीं ग्रैवेयक तक के देवों की ही चर्चा की; क्योंकि मिथ्यादृष्टि जीव वहीं तक जाते हैं, वहीं तक होते हैं; उसके ऊपर अनुदिश और पाँच अनुत्तर हैं, जिनमें सर्वार्थसिद्धि भी शामिल हैं; इनमें रहने वाले जीव तो नियम से सम्यग्दृष्टि ही होते हैं। सम्यग्दृष्टि जीव तो सर्वत्र सुखी ही है; क्योंकि दुःख के कारण तो मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र ही हैं। सम्यग्दृष्टियों को चारित्रमोह के उदय में जो दुःख देखा जाता है, वह नगण्य ही है और अल्पकाल में स्वयं समाप्त हो जानेवाला है; क्योंकि सम्यग्दृष्टि धर्मात्माओं के भवचक्र का अन्त आ गया है।

कल्पोपपन्न और कल्पातीत के भेद से वैमानिक देव भी दो प्रकार के होते हैं। जिनमें इन्द्र, सामानिक आदि दस भेद होते हैं, उन्हें कल्पोपपन्न कहते हैं और जिनमें इसप्रकार के भेद नहीं होते, सभी इन्द्र के समान हो; उन्हें अहमिन्द्र कहते हैं; वे कल्पातीत कहलाते हैं।

पहले स्वर्ग से सोलहवें स्वर्ग तक के देव कल्पोपपन्न हैं और उसके ऊपर के अर्थात् नव ग्रैवेयक, नव अनुदिश और पाँच अनुत्तर के सभी देव कल्पातीत कहलाते हैं।

कल्पोपपन्न देवों में छोटे-बड़े का भेद होने से हीन भावना का भी दुःख पाया जाता है। ऐरावत हाथी भी आभियोग्य जाति का देवगति का जीव है, तिर्यंच नहीं; पर उसे हाथी बनकर इन्द्रों को अपनी पीठ पर बिठाना पड़ता है। ऐसी स्थिति में उसकी मानसिक पीड़ा की कल्पना की जा सकती है। हम भी पंचकल्याणकों में इन्द्रों की ही बोलियाँ लेते हैं, कोई व्यक्ति ऐरावत हाथी की बोली नहीं लेता; इसी कारण उनकी बोली नहीं लगाई जाती।

इसप्रकार हम देखते हैं कि चारों गतियों में जीव एकमात्र मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र के कारण ही दुःखी हैं और उन दुःखों के बचने का एकमात्र उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की प्राप्ति ही है।

इस तीसरे अधिकार में चारों गतियों के दुःखों का निरूपण करने के उपरान्त दुःख के सामान्य स्वरूप का निरूपण किया है, जिसमें चार प्रकार की इच्छाओं का मौलिक चिन्तन प्रस्तुत किया गया है। तदुपरान्त मोक्षसुख की संक्षिप्त चर्चा है। उक्त विषयों की चर्चा अगले प्रवचनों में यथास्थान होगी ही। ●

17 दिसम्बर 2008, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

पाठकों के पत्र

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल कृत प्रवचनसार अनुशीलन को पढ़कर सागर (म. प्र.) से **विनोदजी मोदी** लिखते हैं कि ह्न 'भोगों के इस अविरल प्रवाह में शुद्ध वीतराग शासन की प्रभावना करना पंचमकाल का महान आश्चर्य है।

आपने प्रवचनसार का अनुशीलन करके महानतम कार्य किया है। हम लोगों ने ढाई वर्ष में दो बार प्रवचनसार का स्वाध्याय किया, परन्तु आचार्य कुन्दकुन्द के मर्म को नहीं समझ पाये। आपने अनुशीलन के माध्यम से आचार्य कुन्दकुन्द, आचार्य अमृतचंद्र, आचार्य जयसेन के साथ-साथ अन्य महान आचार्यों, विद्वानों की पद स्थापना करके प्रवचनसार को सरल मौलिक रचना बना दी ह्न यह स्तुत्य कार्य है।

आपने अपने जीवन को जिनालय बनाया, शास्त्र समुद्र मंथन कर शांति सुधा प्रवाहित की जो कि वंदनीय व मनुष्यभव में अनुकरणीय है।

यह पावन धारा अगाधगति से प्रवाहित होती रहे, जिनशासन प्रभावना होती रहे व संसारपीड़ित भव्य आत्मायें परमशांति का वेदन करें ह्न ऐसी मंगल भावना से विनयांजली प्रेषित करता हूँ।' **ह्न विनोद मोदी**

स्नातक परिषद के सदस्यों के पत्र

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक विद्वान **पण्डित बाहुबलीजी भोसगे** ने पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद के पत्र में श्री टोडरमल स्मारक संस्थान के प्रति अपने जो विचार व्यक्त किये, उन्हें यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है ह्न

''श्री टोडरमल स्मारक संस्थान के प्रति मेरे विचार वैसे ही हैं जैसे एक बच्चे के विचार माँ के प्रति होते हैं।

माँ ! तूने उठना सिखाया, बैठना सिखाया, चलना सिखाया, जीना सिखाया। क्या बताऊँ तूने क्या नहीं सिखाया ?

तूने जीने की कला सिखाई, तूने वह शिक्षा दी जिसकी कोई कीमत नहीं, तूने संसार सागर से तिरना सिखाया, तू संसारसागर में डूबते हुये मुझको एक सहारा है, एक आसरा है। तेरे बिना मेरी कल्पना भी नहीं है''

स्लिपडिस्क रोगी ध्यान दें !

सम्पूर्ण उपचार बिना दवा, बिना कसरत, बिना चीरफाड, बिना आराम किए विश्व की नवीनतम तकनीक माइक्रो एक्यूप्रेशर द्वारा शीघ्र उपचार।

डॉ. पीयूष त्रिवेदी (मो.) 09828011871

गोल्ड मेडलिस्ट, बी.ए. एम.एस., एम.डी. (एक्यू.)

डिप्लोमा इन योगा, सुजोक (मास्को) एफ.ए.आर.सी. एस. (लंदन)

मेडिनोवा पोली क्लीनिक, केसरगढ, जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर

समय : सायं 6 बजे से 9 बजे तक, रविवार को प्रात: 8 से 12 बजे तक

नोट – एक्यूप्रेशर सेवा समिति द्वारा 300 से अधिक नि:शुल्क शिविर आयोजित।

अन्य रोग : जोडों का दर्द, गर्दन का दर्द, मोटापा, मायोपैथी, मानस विकृतियां, मधुमेह तथा उच्च रक्तचाप आदि की सफल चिकित्सा।

स्मारक में समयसार की धूम

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय में नियमितरूप से चलने वाली गतिविधियाँ ग्रंथाधिराज समयसार की विषय वस्तु को आधार बनाकर संचालित की जा रही हैं।

दैनिक कार्यक्रमों में प्रात: 8 से 8:30 तक आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के 47 शक्तियों पर सी. डी.प्रवचन, 8:30 से 9:15 तक ब्र. यशपालजी के भी समयसार के आधार से 47 शक्तियों पर प्रवचन तथा प्रवचनोपरान्त प्रात: व दोपहर में पण्डित शांतिकुमारजी पाटील द्वारा समयसार के पूर्वरंग अधिकार पर कक्षा ली जा रही है। सायं को छात्र प्रवचन के क्रम में जीवाजीवधिकार एवं मुख्य प्रवचन के रूप में पण्डित शांतिकुमारजी पाटील द्वारा सर्वविशुद्धज्ञानाधिकार पर चर्चा चल रही है।

इसी दौरान दिनांक 14 दिसम्बर को **समयसार का सार** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. श्रेयांसकुमार जी सिंघई ने की तथा संचालन कु. स्वाती जैन ने किया

यात्रा विशेषांक का प्रकाशन

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित बुंदेलखण्ड यात्रा अत्यंत हर्षोल्लासपूर्वक सम्पन्न हो चुकी है। यात्रा के विशेष समाचार जैन पथप्रदर्शक के अगले अंक (यात्रा विशेषांक) में प्रकाशित किये जायेंगे। **ह्न प्रबंध सम्पादक**

वैराग्य समाचार....

जावरा (रतलाम) निवासी श्री केशरीमलजी मन्नालालजी जैन (कलशधर) का दिनांक 30 अक्टूबर, 08 को देवलाली में देहावसान हो गया। आप अच्छे स्वाध्यायी व तत्वप्रेमी थे तथा सोनगढ़ एवं स्मारक परिसर में लगने वाले प्रत्येक शिविर में उपस्थित रहते थे।

आपकी स्मृति में आपके परिवार की ओर से 5001 रुपये पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के ध्रुवफण्ड में प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मा शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हो ह्न ऐसी भावना है।

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.

प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, डबल एम.ए.(जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल (जैन दर्शन)

प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें –

ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

फोन : (0141) 2705581, 2707458

E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127